राजनैतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक चिंतन का साप्ताहिक समाचार पत्र

प्रज्ञा शनि नेशन्स टाइम्स

संस्करणः नई दिल्ली व पाली राज. 01 सितंबर 2011 - 07 सितंबर 2011, वर्ष : 8, अंक : 40,
साप्ताहिक, मूल्य : 2 रुपये, वार्षिक सदस्यता शुल्कः 250/-

shaninationstimes@ gmail.com

web : www.shanidham.in
www.facebook.com/ shreeshanidham

दाती संदेश

चैन की सांस लेने की कुंजी मिलती है समय के सद्गुरु से

मित्रो, जब से हमने होश संभाला अपने आपको बेचैनी की आग में झुलसते हुए पाया इसमें न जाने कितना वक्त गुजर गया इसका हमें अंदाजा नहीं। जो लोग पुनर्जन्म में विश्वास नहीं करते उनकी बात यदि छोड़ दें तो जन्म-मरण के अनगिनत चक्कर झेलने के बाद हर जन्म में जीव को अपने पूर्वकृत कर्मों का अनुकूल व प्रतिकूल फल भोगना पड़ता है। कभी शुभ कर्मों का स्वाद लेते हुए जीव प्रसन्न होता है तो कभी अशुभ कर्मों की कड़वाहट उसे दुखी कर देती है। लेकिन कर्मों के फल भोगने में जो कष्ट अनुभव में आता है वह तो बहुत कम होता है। असली दुख तो जीव को जनमने और मरने के दौरान प्राप्त होता है। उसी परम दुख से छुटकारा पाने के लिए परमात्मा ने जीव को एक सुअवसर के रूप में मानव शरीर प्रदान किया है, जिसमें कर्म करने की विशेष

क्षमता प्राप्त है। इस क्षमता का उपयोग कर मनुष्य बड़ी आसानी से सुख-दुख भरे भवसागर से पार उतर अपना जीवन सार्थक कर सकता है।

मनुष्य शरीर में जीव हर प्रकार के कर्म करने के लिए स्वतंत्र है। वह चाहे तो कर्म की बेड़ियों में जकड़ाने वाले और भवसिन्धु से पार उतरने वाला पुरुषार्थ भी इस शरीर में कर सकता है। जो मनुष्य संतों की संगत का लाभ उठा निजस्वरूप को पहचानने के लिए समय के सद्गुरु का सान्निध्य हासिल करने में सफल होता है, वह उनसे ज्ञान दृष्टि पाकर माया-मोह के अंधेरे से पार उतर जाता है। उसे धर्म-अधर्म का बोध अनायास हासिल हो जाता है। बेचैन मन को चैन की सांस लेने की कुंजी समय के सद्गुरु से मिल जाती है। हमारे प्राचीन मनीषियों ने धर्म की परिभाषा करते हुए यह स्पष्ट किया है कि जिससे लोक में प्रगति और परलोक में उत्तम गति प्राप्त हो उसे धर्म कहते हैं। निश्चित यह परिभाषा मनुष्य को अपना मार्ग सर्वांगीण विकास करने के लिए मार्गदर्शन देती है।

हम जानते हैं कि चराचर जगत ईश्वर के इच्छा मात्र से संकल्प में आया है। परमात्मा का ही अंश आत्मा है। किंतु अहंकार के आवरण से ढक जाने के कारण उसे जीव संज्ञा प्राप्त हुई है। जब मानव शरीर में जीव को समय के सद्गुरु का सान्निध्य प्राप्त होता है तब उनकी कृपा से शरणागत शिष्य के अंदर आत्म अवलोकन की विशिष्ट शक्ति जाग्रत होती है। जीवात्मा की शक्ति को जागृत करने हेतु किसी दूसरी आत्मा से शक्ति का संचार आवश्यक है। जिस विशिष्ट व्यक्ति की आत्मा से दूसरी आत्मा में शक्ति का संचार होता है वही सद्गुरु कहलाता है और जिसकी आत्मा में उक्त शक्ति संचारित होती है, उसे शिष्य कहते हैं। अंधकार के पथ से हटाकर सद्गुरु मनुष्य को प्रकाश के रास्ते की ओर ले जाते हैं। इसीलिए उन्हें सद्गुरु का दर्जा दिया जाता है।

यथार्थ में सद्गुरु कोई व्यक्ति विशेष न होकर एक शाश्वत शक्ति का स्वरूप होता है, जो पात्रता के अनुसार व्यक्तियों में प्रतिबिंबित होता रहता है। आध्यात्मिक पथ दिखाने वाले सद्गुरु वही व्यक्ति हो सकते हैं, जो अध्यात्म, तत्वज्ञान से अपनी अन्तः चेतना को पूर्ण रूप से विकसित बना चुके रहते हैं। सच्चा सद्गुरु वही होता है जो शास्त्रज्ञ निष्पाप और श्रेष्ठ ब्रह्मज्ञ हो। इस जीवन को सार्थक वही बना सकता है जिसको यह बोध हो जाए कि मैं शरीर नहीं, आत्मा हूं। मैंने ऐसे चोले एक नहीं अनेक धारण किए हैं। पहले जन्म में कुछ और था उससे पहले कुछ और था। आगे कुछ और हो जाऊंगा। यह शरीर कुछ और नहीं यह तो वस्त्र है। वस्त्र तो मुझे बदलने ही होंगे। पुराना शरीर छोड़ना होगा, नया ग्रहण करना पड़ेगा। जिस तरह हम सब शरीर के लिए इतनी मेहनत करते हैं और तरह-तरह सुख साधन जुटाते हैं। इसी तरह अपनी आत्मा के उत्थान के लिए भी उचित प्रयास सदैव करते रहना चाहिए। भगवान का भजन, सेवा, साधना, सुमिरन, समर्पण यह सब आत्मा के उत्थान के लिए होते हैं। तपस्या आत्मा को बलवान करने के लिए की जाती है।

याद रखिए, कोई आदमी बहुत चंचल हो,

शेष पेज 15 पर

व्रत-त्यौहार

3 सितंबर से 9 सितंबर 11 तक
(भाद्रपद शुक्ल षष्ठी से द्वादशी तक)

दि.	वार	तिथि	नक्षत्र	चन्द्र राशि	विशेष
03	शनि	षष्ठी	विशाखा	वृश्चिक	सूर्य षष्ठी व्रत, मुक्ताभरण-संतान सप्तमी व्रत
04	रवि	सप्तमी	अनुराधा	वृश्चिक	श्री महालक्ष्मी व्रतारंभ, श्री राधाष्टमी
05	सोम	अष्टमी	ज्येष्ठा	धनु	दधीचि जयंती
06	मंगल	नवमी	मूल	धनु	श्री चन्द्र नवमी (उदासीन संप्रदाय)
07	बुध	दशमी	पू.षा.	मकर	भद्रा समाप्त रात्रि 9.46 बजे से
08	गुरु	एकादशी	उ.षा.	मकर	भद्रा समाप्त प्रात 9.54 बजे, पद्मा एकादशी व्रत, श्री वामन जयंती, श्रवण द्वादशी
09	शुक्र	द्वादशी	श्रवण	मकर	प्रदोष व्रत, विष्णु पूजा

मैं अपनी पुत्री की जन्मकुंडली भेज रहा हूं। कृपया, उचित मार्गदर्शन दें जिससे उसकी शादी शीघ्रतम हो सके। बार-बार रिश्ते तय होते-होते टूट जाते हैं।

- अजय कुमार

आपकी पुत्री का सिंह लग्न है। पांच ग्रह अष्टम स्थान पर हैं। अमावस्या का जन्म है। शेष दो ग्रह (धीमी गति वाले-बाह्य ग्रह) इन पांचों ग्रहों से षडाष्टक स्थिति में धन भाव में हैं। राहु-केतु क्रमशः द्वादश व छठे स्थान पर हैं।

केतु की महादशा में राहु की अंतर्दशा वर्तमान है, राहु द्वादश में है अतः रोगी या अस्पताल जाने की स्थिति हो सकती है। आपने पुत्री के बारे में कुछ विशेष बताया नहीं। हां, पांच ग्रहों का जमावड़ा अष्टम् में होना वांछनीय स्थिति नहीं है। अकसर इनके जीवन में अकिंचित घटनाएं घटित होती रहती हैं। अवांछनीय, अचानक घटित होता है, फिर भी घबराने की आवश्यकता नहीं।

पुत्री गुरुवार का व्रत करें, हल्दी की गांठ बाईं बाजू पर बांधे अथवा गुरु का पुखराज रत्न तर्जनी (दाईं) अंगुली में धारण कराएं (पुष्य नक्षत्र में धारण करें) व गुरु मंत्र का जाप करवाएं -

ॐ ग्रां ग्रीं ग्रौं सः बृहस्पतये नमः।

वास्तु शास्त्र : परिचय व महत्व

क्रमागत

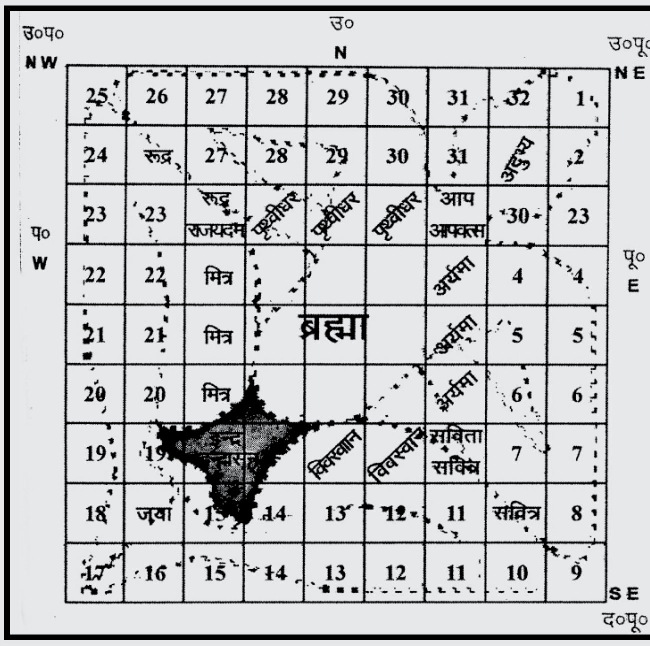

भवन निर्माण जीवन को व्यवस्थित बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। इसलिए उत्तम आवास सुख-समृद्धि का प्रतीक माना जाता है। वास्तुविद् अपनी योग्यता और निर्माण कौशल से भवन को ऐसे रूप में बनाता है ताकि उसमें निवास करने वाले गृह स्वामी सुख-शांति एवं आनंद के साथ अपना जीवन यापन कर सकें।

3. ऊसर भूमि या टीलों से युक्त भूमि उन्नति में बाधक एवं धनहानिकारक होती है। अतः ऐसी भूमि पर भवन–निर्माण नहीं करना चाहिए।

4. भूखण्ड के ईशान कोण की ओर जलाशय (तालाब), नदी, पानी की टंकी (भूमि के नीचे) हों, तो शुभ व मंगलकारी है।

5. भूखण्ड के पूर्वोत्तर की भूमि यदि ढलानदार है तो उत्तम है।

6. भूखण्ड के नैर्ऋत्य कोण की ओर ऊंचे भव हों तो उत्तम है।

7. भूखण्ड के दक्षिण व पश्चिम दिशा में पहाड़ या ऊंची चट्टाने हों तो शुभ हो।

8. भूखण्ड के दक्षिण–पश्चिम दिशा में तालाब, पोखर, गड्ढा या कुआ हो तो अशुभ है।

भूमि ढलान फल

वास्तुविदो के अनुसार उन्नत–अवनत भूमि के शुभ–अशुभ फल बताए गए हैं। अतः गृह–निर्माण करते समय भूमि के ढलान का भलीभांति विचार किया जाना उपयोगी है।

उन्नत भूमि फल

1. पूर्व दिशा में भूमि ऊंची होने पर सन्तान की हानि होती है। सन्तानों का विकास नहीं हो पाता। अतएव ऐसी जमीन पर गृह–निर्माण नहीं करना चाहिए।

2. यदि आग्नेय कोण की दिशा में भूमि उन्नत हो तो सुखदायी व धनदायी होती है।

3. यदि पश्चिम दिशा में भूमि ऊंची है तो वंश में वृद्धि होती है।

4. उत्तर दिशा में उन्नत भूमि सदा सुखदायी होती है।

5. यदि भूमि दक्षिण दिशा में उन्नत हो तो धन व आयु वृद्धि कारक होती है।

6. नैर्ऋत्य कोण की दिशा में भूमि ऊंची हो तो व्यवसाय एवं धन बढ़ाने वाली होती है।

7. ईशान कोण दिशा में भूमि ऊंची हो तो कश्टदायी होती है।

8. वायव्य कोण दिशा में भूमि ऊंची हो तो धनहानि करने वाली होती है।

क्रमशः

आप अपनी समस्याएं हमें सादे कागज पर निम्न जानकारी के साथ लिख कर भेज सकते हैं।

नामः ....

पता : ....

दूरभाष : ....

जन्म तिथि : ....

जन्म समय : ....

जन्म स्थान : ....

आपका प्रश्न : ....

....

एक पत्र में केवल एक प्रश्न ही लिखें। प्राप्त समस्याओं के उत्तर हम आगामी अंकों में प्रकाशित करेंगे। प्रश्न के साथ एक 5 रु. का टिकट लिखा जवाबी लिफाफा अवश्य भेजें।

भेजने का पता :

अंतरराष्ट्रीय वैदिक ज्योतिष
विकास व अनुसंधान संस्थान

श्री शनि तीर्थ क्षेत्र, श्री शनिधाम, असोला,

फतेहपुर बेरी, महरौली, नई दिल्ली-30

फोन : 26653600, 26654400

फैक्स / फोन : 26653500

[illegible]

इस पृष्ठ की सभी सामग्री अंतरराष्ट्रीय वैदिक ज्योतिष विकास व अनुसंधान संस्थान।

काल सर्प योग : कारण व निवारण के उपाय

क्रमागत

यदि राहु दसवें भाव में हो तो जातक अपने पिता के लिए शुभ फल देने वाला तथा स्वयं के लिए श्रेष्ठ स्वभाव वाला होता है। उसे हर स्थान पर मान-सम्मान मिलेगा। ऐसा जातक बहादुरी, धनी तथा बड़ा व्यापारी बनता है। उसके लिए अखाड़े में काम आने वाले सामानों का व्यापार उत्तम रहता है।

उपाय-:

1. नीले या काले रंग की टोपी धारण न करें।

2. सफेद टोपी पहने या सफेद पगड़ी से सिर ढक कर रखें।

3. मसूर की दाल बहते पानी में बहायें या 400 ग्राम खांड मंदिर में दान कर दें या नदी में बहायें।

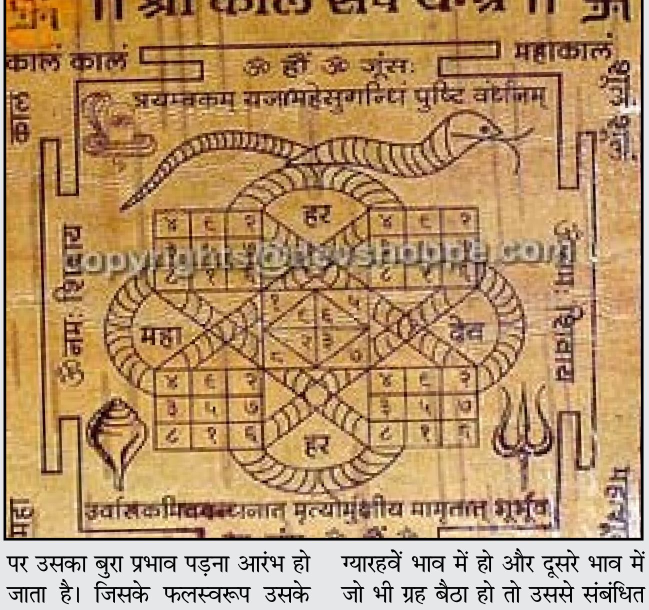

ग्यारहवें भाव में राहु का फल व उपाय

बढ़े नाम बदनाम जब सीना जोरी।
कसम खाके बेचेंगे सब माल चोरी॥

लाल किताब में ग्यारहवें भाव में बैठे राहु को 'पिता को गोली मारे' कहा हैं अर्थात जातक के जन्म से ही पिता पर उसका बुरा प्रभाव पड़ना आरंभ हो जाता है। जिसके फलस्वरूप उसके धनवान पिता की आर्थिक स्थिति धीरे-धीरे बिगड़ने लगती है।

यदि जातक के निज पूर्वकृत कर्मों के फलस्वरूप उसकी जन्मकुंडली में राहु ग्यारहवें भाव में हो और दूसरे भाव में जो भी ग्रह बैठा हो तो उससे संबंधित चीजों व रिश्तेदारों पर बुरा असर हो सकता है। यदि ग्यारहवें भाव में बैठा राहु बहुत ही अशुभ हो तो जातक को 36 वर्ष की आयु आते-आते उसका परिवार आर्थिक तौर पर पूरी तरह बर्बाद हो सकता है। जातक धन की फिजूल खर्ची बहुत करता है या उसका धन चोरी हो सकता है। जातक की बदनामी भी होती है।

यदि राहु ग्यारहवें भाव में स्थित रहता है तो जातक, उसका बेटा व पिता एक साथ न रह पाते हैं। क्योंकि किसी एक की छोटी आयु में मृत्यु हो सकती है। जुदाई अथवा यदि राहु ग्यारहवें भाव में हो और मंगल तीसरे भाव में हो तो जातक के भाई व ताया रोगी हो सकता हैं, अथवा जातक निःसंतान हो सकता है। यदि राहु ग्यारहवें भाव में और केतु पांचवें भाव में अकेले स्थित हों तो जातक का स्वास्थ्य खराब हो सकता है। उसके टांग, कान व रीढ़ की हड्डी में खराबियां होने की प्रबल संभावना रहती है। उसका बेटा भी किसी न किसी रूप में अस्वस्थ हो सकता है। जातक को यात्रा के दौरान हानि भी उठानी पड़ सकती है। ऐसे जातक की हथेली में चित्र में दर्शाये स्थान पर राहु का निशान रहता है।

क्रमशः

मानव शरीर की विशिष्ट संरचना

प्राणायाम द्वारा रोगों के उपचार की विधि भी हमारे देश में सदियों से आजमाई जाती रही है। यदि आप प्राणायाम द्वारा रोगों के उपचार का लाभ लेना चाहते हैं तो उसके लिए आपको किसी कुशल मार्गदर्शक की देखरेख में उसकी विधि सीखनी होगी और यह भी जानना होगा कि किस प्रकार के रोगों का शमन करने के लिए किस प्रकार के प्राणयाम का अभ्यास कितनी अवधि तक किया जाता है।

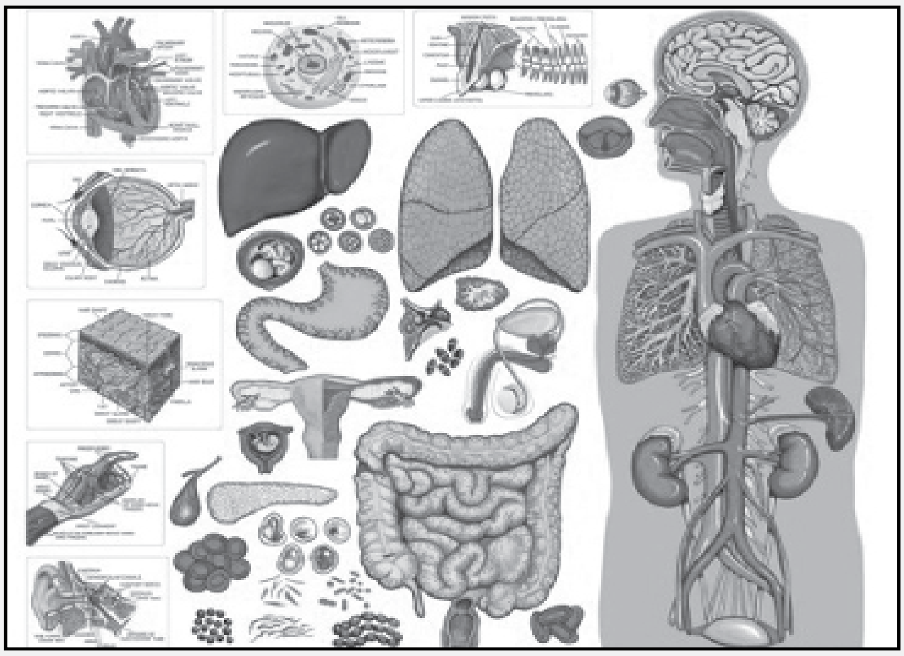

क्रमागत

प्राणायाम का रोगोपचार में उपयोग

प्राणायाम के विविध प्रयोगों से अनेकानेक रोगों को बड़ी आसानी से ठीक किया जा सकता है।हमारे प्राणों के अंदर जो स्पंदन है, वह चेतना का जीवंत

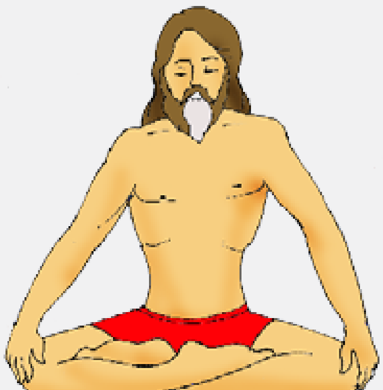

स्पंदन है। वह कोई जड़-स्पंदन नहीं। वह अखिल ब्रह्मांड में व्याप्त परम-चेतना के स्पंदन से जुड़ा हुआ है जिससे इसे चराचर विश्व के एक-एक अणु-परमाणु का उद्भव और संश्लेषण-विश्लेषण निरंतर होता रहता है। अतः प्राणायाम द्वारा किये जाने वाले प्राण चिकित्सा के आगे रसायन या औषधि चिकित्सा का कद काफी छोटा है, साथ ही वे स्थूल उपाय हैं, सूक्ष्म उपाय नहीं।

प्राणायाम के सूक्ष्म चिकित्सा पद्धति द्वारा बड़ी सरलता से प्राणों को सबल बनाया जा सकता है। प्राण-शक्ति का विपुल संग्रह करके मनुष्य को तेजस्वी, ओजस्वी और यशस्वी बनाया जा सकता है। प्राणायाम द्वारा रोगों की चिकित्सा एक मौलिक उपचार है। प्राणायाम और प्राण में सजातीय संबंध हैं। अतः भावना भरित प्राणायाम ही सजातीय कर्षण नियम के अनुसार प्राण-शक्ति प्रवर्धन का सरल एवं नैसर्गिक उपाय है।

प्राणायाम की विधि-व्यवस्था प्राणों के आकर्षण व कुदरती बहाव को स्वाभाविक बनाये रखती है, जिससे प्राण-ऊर्जा का आदान-प्रदान करने वाले आंतरिक अंग स्वस्थ बने रहते हैं और वे अपना कार्य निरंतर सुचारु रूप से करते रहते हैं। अतः प्राणायाम आरोग्यता और बल वृद्धि का एक सर्व सुलभ साधन तो है ही, रोग निवारण और स्वास्थ्य लाभ का अचूक उपाय भी है। इसका प्रभाव भी स्थायी होता है तथा कोई ऐसा दुष्प्रभाव भी नहीं होता जो औषधि से किये जाने वाले उपचारों में अक्सर हो जाया करता है।

शरीर के किसी अंग विशेष की ओर प्राणयाम की ऊर्जा से पुष्ट रक्त का संचार करने के लिये पहले सीधे बैठ जाइये। यदि बैठना संभव न हो तो पीठ के बल सीधा लेटने में भी कोई हानि नहीं है। अब सबसे पहले पांच से दस बार तक इस प्रकार श्वास लेने व छोड़ने की क्रिया संपादित करें कि श्वास निकालने में जितना समय लगे उतना ही समय श्वास को बाहर निकालने में लगाया जाये जबकि स्वांस को उसके आधे समय तक अंदर रोकने में लगाया जाये। मान लीजिये यदि आप द्वारा दस बार तक गिनते हुए श्वास लिया गया है तो आप तब तक श्वास अंदर ही रोके रखिये जब तक आप पांच बार तक गिनती न कर लें। तत्पश्चात दस बार गिनती करते हुए सांस छोड़ना चाहिये और पाँच बार तक गिनती करने तक दूसरा स्वांस नहीं लेना चाहिए। स्वांस भरने और स्वांस छोड़ने पर अंदर या बाहर रोकने की मात्रा, श्वास भरने और छोड़ने की मात्रा की आधी होनी चाहिए।

क्रमशः

साप्ताहिक राशिफल

8 सितंबर - 14 सितंबर तक

मेष (चू, चे, चो, ला, ली, लू, ले, लो, अ)

8, 9, 10 को ग्रह-गोचर शुभ व अनुकूल होगा। व्यवसायिक उन्नति के अवसर प्राप्त होंगे। 11, 12 को समय उत्तम होगा। बड़े भाई व मित्रों का सहयोग होगा। नवीन व्यवसायिक योजना बनेंगी। पूंजी निवेश का लाभ होगा। 13, 14 को समय प्रतिकूल होगा। भाग्य साथ नहीं देगा।

वृष (ई, ऊ, ए, ओ, वा, वी, वु, वे, वो)

8, 9 को समय व परि. स्थिति में सुधार होगा। कार्य-व्यवस्था आदि में सुधार महसूस करेंगे।10, 11, 12 को ग्रह-गोचर शुभ व अनुकूल होगा। रूके हुए सरकारी कार्य सम्पन्न होंगे। राजकीय मान-सम्मान व धन लाभ होना संभव होगा। 13, 14 को समय शुभ व अनुकूल होगा।

मिथुन (का, कि, कू, घ, ङ, छ, के, को, ह)

8, 9 को सितारों की चाल प्रतिकूल होगी। भाग्य साथ नहीं देगा। आशानुकूल कार्य नहीं बन पायेंगे। 10, 11, 12 को समय मध्यम होगा। हालात व परिस्थिति में सुधार होगा। 13, 14 को समय शुभ व अनुकूल होगा। माता-पिता का सुख सहयोग बढ़ेगा।

कर्क (ही, हू, हे, हो, डा, डी, डू, डे, डो)

8, 9 को समय शुभ होगा। घर-परिवार में शुभ कार्य की योजना सफल होगी। मन में साहस व उत्साह बना रहेगा।10, 11, 12 को सितारों की चाल प्रतिकूल होगी। कार्यक्षेत्र में गड़बड़ी व अव्यवस्था होगी। 13, 14 को धीरे-धीरे परिस्थियों में सुधार होगा।

सिंह (मा, मी, मू, मे, मो, टा, टी, टू, टे)

8, 9 को ग्रह-गोचर शुभ व अनुकूल होगा। मानसिक व शारीरिक परेशानी दूर होगी। परिश्रम व प्रतियोगिता आदि में विजयी होंगे। 10, 11, 12 को समय शुभ व अनुकूल होगा। मनोरंजन आदि के साधन उपलब्ध होंगे। धन लाभ व मन में प्रसन्नता बनी रहेगी। 13, 14 को सितारों की चाल प्रतिकूल होगी।

कन्या (टो, पा, पी, पू, ष, ण, ठ, पे, पो)

8, 9 को दाम्पत्य जीवन में सुख व सहयोग बना रहेगा। संतान संबंधी कुछ परेशानियां हो सकती है। 10, 11 को ग्रह-गोचर शुभ होगा। पुराने ऋृण-रोग आदि से छुटकारा मिलेगा। स्वास्थ्य उत्तम रहेगा। 13, 14 को समय शुभ होगा। घूमने-फिरने का अवसर मिलेगा।

तुला (रा, री, रू, रे, रो, ता, ती, तु, ते)

8, 9 को सितारों की चाल प्रतिकूल होगी। धैर्य व विवेक से कार्य करना उचित होगा। 10, 11, 12 को समय व परिस्थिति में सुधार होगा। विद्या अध्ययन आदि में रुचि बढ़ेगी। अध्यात्म की तरफ झुकाव होगा। 13, 14 को ग्रह-गोचर की स्थिति शुभ होगी। साहस व पराक्रम बढ़ेगा।

वृश्चिक (तो, ना, नी, नू, ने, नो, या, यी, यू)

8, 9 को समय पुनः शुभ होगा। भाग्य साथ देगा उन्नति के अवसर प्राप्त होंगे। 10, 11, 12 को सितारों की चाल प्रतिकूल होगी। परिवार में वैचारिक मतभेद व तनाव उत्पन्न हो सकता है। 13, 14 को विद्या अध्ययन आदि में रुचि बढ़ेगी।

धनु (ये, यो, भा, भी, भू, धा, फा, ढा, भे)

8, 9 को समय मध्यम होगा। पारिवारिक जिम्मेदारियां बढेंगी। घर में मेहमानों का आवागमन बना रहेगा। 10, 11, 12 को समय शुभ व अनुकूल होगा। भाग्य साथ देगा। साहस व पराक्रम बढ़ेगा। 13, 14 को सितारों की चाल प्रतिकूल होगी।भाई-बन्धु से विवाद संभव होगा।

मकर (भो, जा, जी, जो, खी, खू, खे, खो, गा, गी)

8, 9 को ग्रह-गोचर की स्थिति अनुकूल होगी। परिस्थिति में सुधार होगा। स्वास्थ्य उत्तम रहेगा। कार्य क्षमता में वृद्धि होगी।10, 11, 12 को समय मध्यम होगा। व्यर्थ का भाग-दौड़ व परेशानी लगा रहेगा। 13, 14 को आय के साधन में बढ़ोतरी के अवसर मिलेंगे।

कुम्भ (गु, गे, गो, सा, सी, सू, से, सो, दा)

8, 9 को ग्रह-गोचर की अशुभता मानसिक व शारीरिक तनाव उत्पन्न करेगी। 10, 11, 12 को समय शुभ होगा, बाधा व समस्यादि का निपटारा स्वयं हो जायेगा। मानसिक रूप से संतुष्ट होंगे। 13, 14 को समय मध्यम होगा। कार्य आदि में बाधा उत्पन्न हो सकती है।

मीन (दी, दू, थ, झ, ञ , दे, दो, चा, ची)

8, 9 को समय शुभ है। अनुकूल फलों को देने में समर्थ होगा। 10, 11, 12 को सितारों की चाल प्रतिकूल होगी। कार्य संस्थान आदि में अवरोध व व्यवधान उत्पन्न हो सकता है। 13, 14 को ग्रह-गोचर शुभ व अनुकूल होगा।

स्यमंतक मणि की कथा

जिसे सुनने से भाद्रपद शुक्ल चौथ के चंद्रमा के दर्शन का दोष दूर होता है।

क्रमागत

वहाँ एक सिंह ने घोड़े सहित प्रसेन को मार डाला और उस मणि को छीन लिया। वह अभी पर्वत की गुफा में प्रवेश कर ही रहा था कि मणि के लिए ऋक्षराज जाम्बवान ने उसे मार डाला। उन्होंने वह मणि अपनी गुफा में ले जाकर बच्चे को खेलने के लिए दे दी। अपने भाई प्रसेन के न लौटने से उसके भाई सत्राजित को बड़ा दुःख हुआ। वह कहने लगा, बहुत सम्भव है श्री कृष्ण ने ही मेरे भाई को मार डाला हो, क्योंकि वह मणि गलें में डालकर वन में गया था। सत्राजित की यह बात सुनकर लोग आपस में काना-फूँसी करने लगे। जब भगवान ने सुना कि यह कलङ्क का टीका मेरे ही सिर लगाया गया है, तब वे उसे धो बहाने के उद्देश्य से नगर के कुछ सभ्य पुरुषों को साथ लेकर प्रसेन को ढूँढ़ने के लिए वन में गए।

वहाँ खोजते-खोजते लोगों ने देखा कि घोर जंगल में सिंह ने प्रसेन और उसके घोड़े को मार डाला है। जब वे लोग सिंह के पैरों का चिह्न देखते हुए आगे बढ़े तब उन लोगों ने यह भी देखा कि पर्वत पर एक रीछ ने सिंह को भी मार डाला है।

भगवान श्री कृष्ण ने सब लोगों को बाहर ही बिठा दिया और अकेले ही घोर अन्धकार से भरी हुई ऋक्षराज की भयङ्कर गुफा में प्रवेश किया। भगवान ने वहाँ जाकर देखा कि श्रेष्ठ मणि स्यमन्तक को बच्चों का खिलौना बना दिया गया है। वे उसे हर लेने की इच्छा से बच्चे के पास जा खड़े हुए। उस गुफा में एक अपरिचित मनुष्य को देखकर बच्चे की धाय भयभीत की भाँति चिल्ला उठी। उसकी चिल्लाहट सुनकर परम बली ऋक्षराज जाम्बवान क्रोधित होकर वहाँ दौड़ आए। जाम्बवान उस समय कुपित हो रहे थे। उन्हें भगवान की महिमा उनके प्रभाव का पता न चला। उन्होंने उन्हें एक साधारण मनुष्य समझ लिया और वे अपने स्वामी भगवान श्री कृष्ण से युद्ध करने लगे। जिस प्रकार मांस के लिए दो बाज आपस में लड़ते हैं, वैसे ही घमासान युद्ध

शेष पेज 14 पर

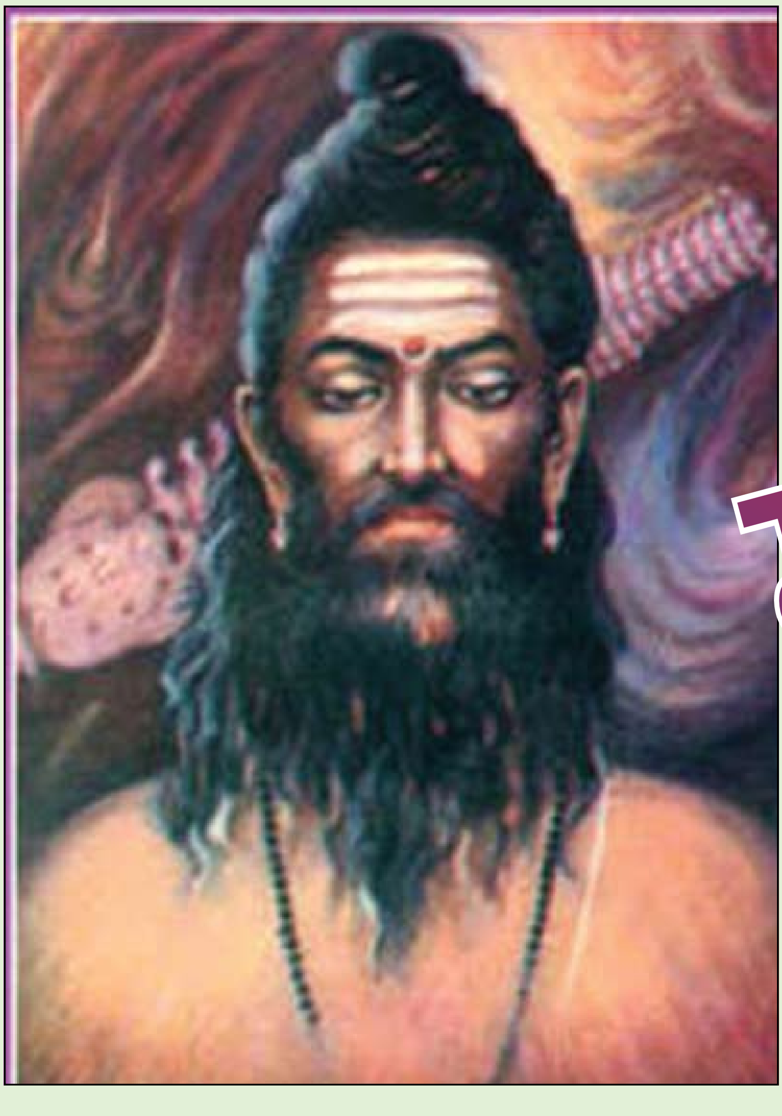

जयंती पर विशेष

महर्षि दधीचि

जिन्होंने देवों का कार्य सिद्ध करने के लिए अपनी अस्थियों का सहर्ष दान कर दिया था। उनका जन्म भाद्रपद शुक्ल अष्टमी को हुआ था जो तिथि इस साल 5 सितंबर को पड़ रही है। इस पावन अवसर पर हम सम्बंधित प्रसंग स्कंद पुराण से उद्धृत करते हुए प्रस्तुत कर रहे हैं।

पूर्वकाल में अमृत मन्थन के समय देवताओं ने जिन दैत्यों को मार डाला था और शुक्राचार्य ने पुनः जिन्हें जीवित कर दिया था, उनमें से राजा बलि को छोड़कर शेष सभी दैत्य पाताल से निकल कर वृत्रासुर के पास चले आये। पाताल से आये हुए असुरों के साथ वृत्रासुर ने अकेले ही अपने विशाल शरीर द्वारा सम्पूर्ण भूमण्डल को ढक लिया।

उस समय उससे पीड़ित हुए तपस्वी महर्षि तुरंत ब्रह्मा जी के पास गए और उन्होंने अपनी सारी कष्ट-कथा कह सुनाई। तब ब्रह्मा जी ने गन्धर्वों, मरुद्गणों तथा इन्द्रादि देवताओं को बताया कि विश्वकर्मा ने बड़ी भारी तपस्या करके तुम सब लोगों का वध करने के लिए अत्यन्त तेजस्वी वृत्रासुर को उत्पन्न किया है। वह सब दैत्यों का महान अधीश्वर बना हुआ है। अब तुम लोग ऐसा प्रयत्न करो, जिससे वह तुम्हारे द्वारा मारा जा सके।

ब्रह्मा जी का यह वचन सुनकर इन्द्र आदि देवताओं ने कहा - भगवन! जब हमारे ये इन्द्र ब्रह्महत्या से मुक्त होकर स्वर्ग के सिंहासन बिठाये गए, उस समय हम लोगों के द्वारा एक न करने योग्य कार्य हो गया है। अब उस भूल के दुष्परिणाम से पार पान हमारे लिए कठिन है। भूल यह हुई कि हम

शेष पेज 15 पर

जीवितत्पुत्रिकाष्टमी व्रत

जिसके पुण्य प्रताप से संतान दीर्घायु होती है और भगवान सूर्य और पितरों के आशीर्वाद से निःसंतान व्रतियों की गोद भी भर जाती है।

इस व्रत से पूर्वकृत अशुभ कर्मों का प्रायश्चित भी हो जाता है। ग्रह बाधाओं व प्रतिकूलताओं के शमन में सहायक इस व्रत से घर में सुख-समृद्धि भी बढ़ती है। पितृपक्ष में पड़ने वाली आश्विन कृष्ण अष्टमी को जीवित्पुत्रिकाष्टमी भी कहते हैं। खासतौर अपने पुत्र की आयु बढ़ाने के लिए या जिसके पुत्र होकर मर जाते हैं, उसे रोकने के लिए व्रती यह व्रत करते हैं। इस व्रत को करने से पुत्र जीवित और चिरायु होते हैं। इस साल यह व्रत 20 सितंबर को है।

अष्टमी को नित्यकार्य करने के पश्चात् सोने की प्रतिमा बनाकर सूर्य नारायण का पूर्वोक्त षोडशोपचार विधि से पूजन करें। एक समय बाजरा तथा चने के अन्न का भोजन करें, ब्रह्मचर्य से रहें, सारी रात जागरण करें, दूसरे दिन प्रातः समय उठकर, स्नानादि करके व्रत का आरंभ करने के निमित्त ब्राह्मणों को भोजन कराकर दक्षिणा दें। फिर स्वयं भी भोजन करें। इसी प्रकार पांच या सात वर्ष तक करने के पश्चात इसका उद्यापन करें। इस प्रकार जो मनुष्य इस व्रत को करते हैं उनके पुत्र चिरायु होते हैं। लोकाचार भेद से यह व्रत करने के एक दिन पहले सांयकाल में संवां का भोजन करते हैं और अष्टमी को निर्जला उपवास करते हैं और शाम को कथा सुननदूसरे दिन पारण करते हैं।

व्रत कथा -

एक समय धौम्य नामक ऋषि की पत्नी सुकेसी के छः पुत्र हुए, परन्तु विवाह होते ही पुत्र की मृत्यु हो जाती। इस दशा में सुकेसी ने अपने प्राणों का त्याग करने का निश्चय किया। तब धौम्य ऋषि ने उसका धैर्य बंधाया और वह पुरी से भगवान कृष्ण के पास चले गये। वहां जाकर ऋषि ने कहा - तुम्हारे राज्य पर धिक्कार है, जिसमें स्त्रियों के पुत्रों की मृत्यु उसके माता-पिता के सामने होती है। यदि किसी का पुत्र अपने माता-पिता के सामने मृत्यु को प्राप्त हो जाये तो उस देश के राजा को अधर्मी समझना चाहिए। अन्यथा, धर्मात्मा राजा के राज्य में कभी पुत्र की मृत्यु उसके माता-पिता के सामने नहीं हो सकती। तुमको राज्य करने का कोई अधिकार नहीं है।

भगवान कृष्ण कहने लगे - हे ब्राह्मण, जीना अथवा मरना यह तो अपने कर्मों के अधीन है, इसमें किसी का कोई वश नहीं चलता, तुम्हारे पुत्रों का तुम्हारा इतना ही संयोग था। तब धौम्य ऋषि कहने लगे, यदि तुम मेरे पुत्र की रक्षा का वचन नहीं दोगे तो मैं और मेरी स्त्री यहीं पर अपने प्राण दे देंगे।

उनके वचनों को सुनकर श्री कृष्ण जी बोले - हे ब्राह्मण अब थोड़े ही दिनों में आश्विन कृष्ण अष्टमी आने वाली है, उस दिन तुम भगवान सूर्य की प्रसन्नता के लिए उनके पुत्र जीजि के नाम का व्रत करो। इस व्रत के करने से तुम्हारे सब पाप नष्ट हो जायेंगे और तुम्हारा सातवां पुत्र जीवित रहकर चिरायु होगा। इस कार्य में तुम्हारी रक्षा मैं स्वयं करूंगा।

क्रमशः

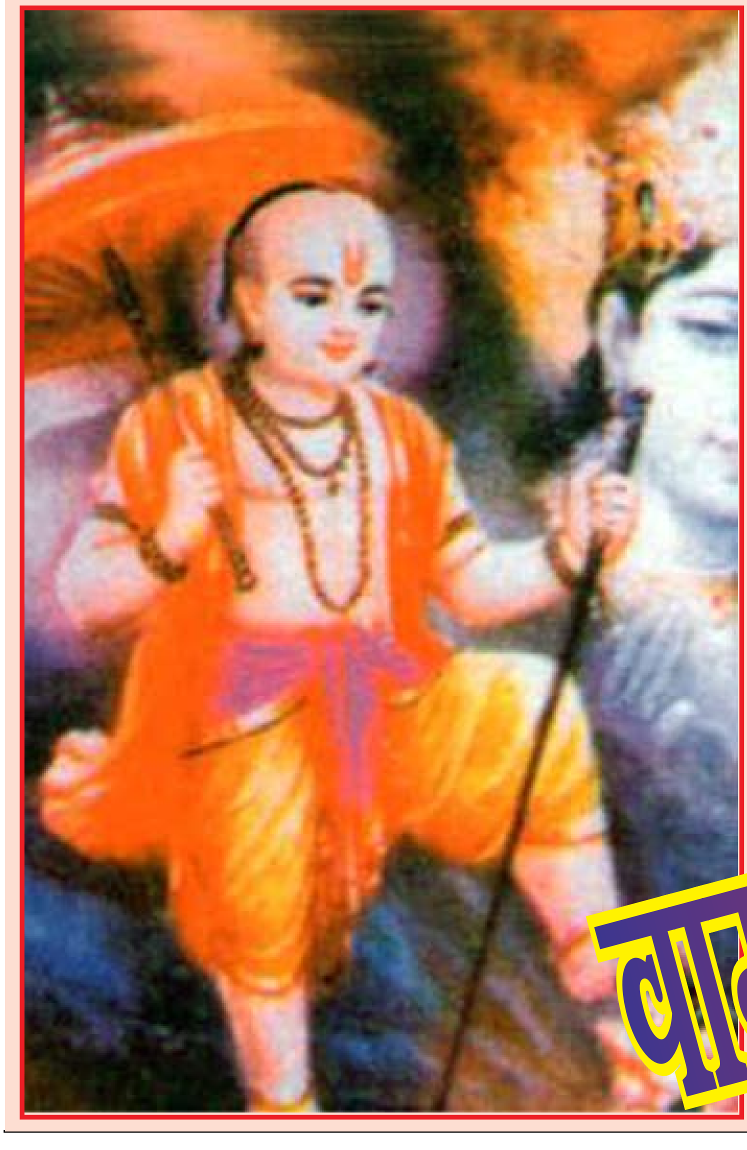

वामनावतार की कथा

वामन भगवान अदिति के गर्भ से प्रादुर्भूत हुए। उनके पैर छोटे, शरीर छोटा, सिर बड़ा और छोटे बच्चे के समान हाथ-पैर, उदर आदि थे। वामन रूप में जब अदिति ने पुत्र को देखा और जब वह कुछ कहने को उद्यत हुई तो देवमाया से उनकी वाणी अवरुद्ध हो गयी।

जयंती पर विशेष

भगवान विष्णु ने अनेक अवतार लेकर साधु-संतों व देवों की सहायता की है और युग-युग में धर्म की स्थापना करते रहें हैं। उन्होंने वामन अवतार धारण कर दैत्यराज बलि को सुतल लोक में भेज दिया। भगवान का वह अवतार हुआ था जो इस वर्ष 8 सितंबर को पड़ रहा है। प्रस्तुत है इस अवसर पर भविष्य पुराण से उद्धृत यह प्रसंग।

एक बार युधिष्ठिर के पूछने पर भगवान श्री कृष्ण ने कहा- युधिष्ठिर! भाद्रपद मास की एकादशी तिथि यदि श्रवण नक्षत्र से युक्त हो तो उसे विजया तिथि कहते हैं, वह भक्तों को विजय प्रदान करने वाली है। एक बार दैत्यराज बलि से पराजित होकर सभी देवता भगवान विष्णु की शरण में पहुँचे और कहने लगे- प्रभो! सभी देवताओं के एक मात्र आश्रय आप ही हैं। आप महान कष्ट से हमारा उद्धार कीजिये। इस दैत्य बलि का आप विनाश कीजिये।

क्रमशः

पेज 12 का शेष

स्यमंतक मणि की...

करने लगे।

पहले तो उन्होंने अस्त्र-शस्त्रों का प्रहार किया, फिर शिलाओं का, तत्पश्चात वे वृक्ष उखाड़कर एक दूसरे पर फेंकने लगे। अन्त में उनमें बाहु युद्ध होने लगा। वज्र प्रहार के समान कठोर घूँसों से आपस में वे अट्ठाईस दिन तक बिना विश्राम किए रात-दिन लड़ते रहे। अन्त में भगवान श्री कृष्ण के घूँसों की चोट से जाम्बवान के शरीर की एक-एक गाँठ टूट फूट गई। उत्साह जाता रहा। शरीर पसीने से लथपथ हो गया। तब उन्होंने अत्यन्त विस्मित व चकित होकर भगवान श्री कृष्ण से कहा- प्रभो! मैं जान गया। आप ही समस्त प्राणियों के स्वामी, रक्षक, पुराणपुरुष भगवान विष्णु हैं। आप ही सबके प्राण, इन्द्रियबल, मनोबल और शरीर बल हैं। आप विश्व के रचयिता ब्रह्मा आदि को भी बनाने वाले हैं। बनाए हुए पदार्थों में भी सत्तारूप से आप ही विराजमान हैं। काल के जितने भी अवयव हैं, उनके नियामक परम काल आप ही हैं और शरीर भेद से भिन्न-भिन्न प्रतीयमान अन्तरात्माओं के परम आत्मा भी आप ही हैं। प्रभो! मुझे स्मरण है, आपने अपने नेत्रों में तनिक सा क्रोध का भाव लेकर तिरछी दृष्टि से समुद्र की ओर देखा था। उस समय समुद्र के अंदर रहने वाले बड़े-बड़े घड़ियाल और मगरमच्छ क्षुब्ध हो गए थे और समुद्र ने आपको मार्ग दे दिया था। तब आपने उस पर सेतु बाँधकर सुन्दर यश की स्थापना की तथा लङ्का का विध्वंस किया। आपके बाणों से कट-कटकर राक्षसों के सिर पृथ्वी पर लोट रहे थे। जब ऋक्षराज जाम्बवान ने भगवान को पहचान लिया तब कमलनयन श्री कृष्ण ने अपने परम कल्याणकारी शीतल करकमल को उनके शरीर पर फेर दिया और फिर अहैतुकी कृपा से भरकर प्रेम गम्भीर वाणी से अपने भक्त जाम्बवान जी से कहा- ऋक्षराज! हम मणि के लिए ही तुम्हारी इस गुफा में आएं हैं। इस मणि के द्वारा मैं अपने पर लगे झूठे कलङ्क को मिटाना चाहता हूँ। भगवान के ऐसा कहने पर जाम्बवान ने बड़े आनन्द से उनकी पूजा करने के लिए अपनी कन्या कुमारी जाम्बवती को मणि के साथ उनके चरणों में समर्पित कर दिया।

भगवान श्री कृष्ण जिन लोगों को गुफा के बाहर छोड़ गए थे, उन्होंने बारह दिन तक उनकी प्रतीक्षा की। परन्तु जब उन्होंने देखा कि अब तक वे गुफा में से नहीं निकले तब वे अत्यन्त दुःखी होकर द्वारका को लौट गए। वहाँ जब माता देवकी, रुक्मिणी, वसुदेवजी तथा अन्य सम्बन्धियों और कुटुम्बियों को यह मालूम हुआ कि श्री कृष्ण गुफा में से नहीं निकले तब उन्हें बड़ा शोक हुआ। सभी द्वारकावासी अत्यन्त दुःखित होकर सत्राजित को भला-बुरा कहने लगे और भगवान श्री कृष्ण की प्राप्ति के लिए महामाया दुर्गा देवी की शरण में गए, उनकी उपासना करने लगे। उनकी उपासना से दुर्गा देवी प्रसन्न हुईं और उन्होंने आशीर्वाद दिया। उसी समय उनके बीच में मणि और अपनी नववधू जाम्बवती के साथ सफल मनोरथ होकर श्री कृष्ण सबको प्रसन्न करते हुए प्रकट हो गए। सभी द्वारकावासी भगवान श्री कृष्ण को पत्नी के साथ और गले में मणि धारण किए हुए देखकर परमानन्द में मग्न हो गए, मानो कोई मरकर लौट आया हो।

तदनन्तर भगवान ने सत्राजित को राजसभा में महाराज उग्रसेन के पास बुलवाया और जिस प्रकार मणि प्राप्त हुई थी, वह सब कथा सुनाकर उन्होंने वह मणि सत्राजित को सौंप दी। सत्राजित अत्यन्त लज्जित हो गया। मणि तो उसने ले ली, परन्तु उसका मुँह नीचे की ओर लटक गया। अपने अपराध पर उसे बड़ा पश्चात्ताप हो रहा था, किसी प्रकार वह अपने घर पहुँचा।

उसके मन की आँखों के सामने निरन्तर अपना अपराध नाचता रहता। बलवान के साथ विरोध करने के कारण वह भयभीत भी हो गया था। अब वह यही सोचता रहता कि मैं अपने अपराध का मार्जन कैसे करूँ? मुझ पर भगवान श्री कृष्ण कैसे प्रसन्न हों। मैं ऐसा कौन सा काम करूँ, जिससे मेरा कल्याण हो और लोग मुझे कोसें नहीं। सचमुच मैं अदूरदर्शी, क्षुद्र हूँ। धन के लोभ से मैं बड़ी मूढ़ता का काम कर बैठा। अब मैं रमणियों में रत्न के समान अपनी कन्या सत्यभामा और वह स्यमन्तक मणि दोनों ही श्री कृष्ण को दे दूँ। यह उपाय बहुत अच्छा है। इसी से मेरे अपराध का मार्जन हो सकता है, और कोई उपाय नहीं है। सत्राजित ने अपनी विवेक बुद्धि से ऐसा निश्चय करके स्वयं ही इसके लिए उद्योग किया और अपनी कन्या तथा स्यमन्तक मणि दोनों ही ले जाकर श्री कृष्ण को अर्पण कर दीं। सत्यभामा शील स्वभाव, सुन्दरता, उदारता आदि सद्गुणों से सम्पन्न थीं। बहुत से लोग चाहते थे कि सत्यभामा हमें मिले और उन लोगों ने उन्हें माँगा भी था। परन्तु अब भगवान श्री कृष्ण ने विधिपूर्वक उनका पाणिग्रहण किया। भगवान श्री कृष्ण ने सत्राजित से कहा- हम स्यमन्तक मणि न लेंगे। आप सूर्य भगवान के भक्त हैं, इसलिए वह आपके पास ही रहे। हम तो केवल उसके फल के अर्थात उससे निकले हुए सोने के अधिकरी हैं। वही आप हमें दे दिया करें।

श्री शुकदेव जी कहते हैं- यद्यपि भगवान श्री कृष्ण को इस बात का पता था कि लाक्षागृह को आग से पाण्डवों का बाल भी बाँका नहीं हुआ है, तथापि जब उन्होंने सुना कि कुन्ती और पाण्डव जल मरे, तब उस समय का कुल परम्परोचित व्यवहार करने के लिए वे बलराम जी के साथ हस्तिनापुर गए। वहाँ जाकर भीष्मपितामह, कृपाचार्य, विदुर, गान्धारी और द्रोणाचार्य से मिलकर उनके साथ समवेदना- सहानुभूति प्रकट की और उन लोगों से कहने लगे- हाय-हाय! यह तो बड़े ही दुःख की बात हुई।

भगवान श्री कृष्ण के हस्तिनापुर चले जाने से द्वारका में अक्रूर और कृतवर्मा को अवसर मिल गया। उन लोगों ने शतधन्वा से आकर कहा- तुम सत्राजित से मणि क्यों नहीं छीन लेते? सत्राजित ने अपनी श्रेष्ठ कन्या सत्यभामा का विवाह हमसे करने का वचन दिया था और अब उसने हम लोगों का तिरस्कार करके उसे श्री कृष्ण के साथ व्याह दिया है। अब सत्राजित भी अपने भाई प्रसेन की तरह क्यों न यमपुरी में जाए? शतधन्वा पापी था और सब तो उसकी मृत्यु भी उसके सिर पर नाच रही थी। अक्रुर और कृतवर्मा के इस प्रकार बहकाने पर शतधन्वा उनकी बातों में आ गया और उस महादुष्ट ने लोभवश सोये हुए सत्राजित को मार डाला। इस समय स्त्रियाँ अनाथ के समान रोने चिल्लाने लगीं, परन्तु शतधन्वा ने उनकी ओर तनिक भी ध्यान न दिया, जैसे कसाई पशुओं की हत्या कर डालता है, वैसे ही वह सत्राजित को मारकर और मणि लेकर वहाँ से चम्पत हो गया।

सत्यभामा जी को यह देखकर कि मेरे पिता मार डाले गए हैं, बड़ा शोक हुआ और वे हाय पिताजी! हाय पिताजी! मैं मारी गई- इस प्रकार पुकार-पुकार कर विलाप करने लगीं। बीच-बीच में वे बेहोश हो जातीं और होश में आने पर फिर विलाप करने लगतीं। इसके बाद उन्होंने अपने पिता के शव को तेल के कड़ाहे में रखवा दिया और आप हस्तिनापुर को गईं। उन्होंने बड़े दुःख से भगवान श्री कृष्ण को अपने पिता की हत्या का वृत्तान्त सुनाया- यद्यपि इन बातों को भगवान भगवान श्री कृष्ण पहले से ही जानते थे। सर्वशक्तिमान भगवान श्री कृष्ण और बलराम जी ने सब सुनकर मनुष्यों की सी लीला करते हुए अपनी अपनी आँखों में आँसू भर लिए और विलाप करने लगे कि अहो! हम लोगों पर तो यह बहुत बड़ी विपत्ति आ पड़ी। इसके बाद भगवान श्री कृष्ण सत्यभामा और बलराम जी के साथ हस्तिनापुर से द्वारका लौट आए और शतधन्वा को मारने तथा उससे मणि छीनने का उद्योग करने लगे।

सर्वशक्तिमान सर्वव्यापक भगवान श्री कृष्ण के पराक्रमों से परिपूर्ण यह आख्यान समस्त पापों, अपराधों और कलङ्कों का मार्जन करने वाला तथा परम मङ्गलमय है। जो इसे पढ़ता, सुनता अथवा स्मरण करता है, वह सब प्रकार की अपकीर्ति और पापों से छूटकर शान्ति का अनुभव करता है।

जब शतधन्वा को यह मालूम हुआ कि भगवान श्री कृष्ण मुझे मारने का उद्योग कर रहे हैं, तब वह बहुत डर गया और अपने प्राण बचाने के लिए उसने कृतवर्मा से सहायता माँगी। तब कृतवर्मा ने कहा- भगवान श्री कृष्ण और बलराम जी सर्वशक्तिमान ईश्वर हैं। मैं उनका सामना नहीं कर सकता। भला, ऐसा कौन है जो उनके साथ वैर बाँधकर इस लोक और परलोक में सकुशल रह सके? तुम जानते हो कि कंस उन्हीं से द्वेष के कारण राज्यलक्ष्मी को खो बैठा और अपने अनुयायियों के साथ मारा गया। जरासन्ध जैसे शूरवीर को भी उनके सामने सत्रह बार मैदान में हारकर बिना रथ के ही अपनी राजधानी में लौट जाना पड़ा था। जब कृतवर्मा ने उसे इस प्रकार टका सा जवाब दे दिया, तब शतधन्वा ने सहायता के लिए अक्रूर जी से प्रार्थना की। उन्होंने कहा- भाई! ऐसा कौन है, जो सर्वशक्तिमान भगवान का बल पौरुष जानकर भी उनसे वैर-विरोध ठाने। जो भगवान खेल-खेल में ही इस विश्व की रचना, रक्षा और संहार करते हैं तथा जो कब क्या करना चाहते हैं- इस बात को माया से मोहित ब्रह्मा आदि विश्व विधाता भी नहीं समझ पाते, जिन्होंने सात वर्ष की अवस्था में- जब वे निरे बालक थे, एक हाथ से ही गिरिराज गोवर्द्धन को उखाड़ लिया और जैसे नन्हे-नन्हे बच्चे बरसाती छत्ते को उखाड़कर हाथ में रख लेते हैं, वैसे ही खेल-खेल में सात दिनों तक उसे उठाये रखा। मैं तो उन भगवान श्री कृष्ण को नमस्कार करता हूँ। उनके कर्म अद्भुत हैं। वे अनन्त, अनादि, एकरस और आत्मस्वरूप हैं। मैं उन्हें नमस्कार करता हूँ। जब इस प्रकार अक्रूर जी ने भी उसे कोरा जवाब दे दिया तब शतधन्वा ने स्यमन्तक मणि उन्हीं के पास रख दी और आप चार सौ कोस लगातार चलने वाले घोड़े पर सवार होकर वहाँ से बड़ी फुर्ती से भागा।

भगवान श्री कृष्ण और बलराम दोनों भाई अपने उस रथ पर सवार हुए जिस पर गरुड़ चिह्न से चिह्नित ध्वजा फहरा रही थी और बड़े वेगवाले घोड़े जुते हुए थे। अब उन्होंने अपने श्वसुर सत्राजित को मारने वाले शतधन्वा का पीछा किया। मिथिलापुरी के निकट एक उपवन में शतधन्वा का घोड़ा गिर पड़ा, अब वह उसे छोड़कर पैदल ही भागा। वह अत्यन्त भयभीत हो गया था। भगवान श्री कृष्ण भी क्रोध करके उसके पीछे दौड़े। शतधन्वा पैदल ही भाग रहा था, इसलिए भगवान ने भी पैदल ही दौड़कर अपने तीक्ष्ण धार वाले चक्र से उसका सिर उतार लिया और उसके वस्त्रों में स्यमन्तक मणि को ढूँढ़ा। परन्तु जब मणि मिली नहीं तब भगवान श्री कृष्ण ने बड़े भाई बलराम जी के पास आकर कहा- हमने शतधन्वा को व्यर्थ ही मारा। क्योंकि उसके पास स्यमन्तक मणि तो है ही नहीं।

बलराम जी ने कहा- इसमें सन्देह नहीं कि शतधन्वा ने स्यमन्तक मणि को किसी न किसी के पास रख दिया है। अब तुम द्वारका जाओ और उसका पता लगाओ। मैं विदेहराज से मिलना चाहता हूँ, क्योंकि वे मेरे बहुत ही प्रिय मित्र हैं। यह कहकर यदुवंशशिरोमणि बलराम जी मिथिला नगरी में चले गए। जब मिथिला नरेश ने देखा कि पूजनीय बलराम जी महाराज पधारे हैं, तब उनका हृदय आनन्द से भर गया। उन्होंने झटपट अपने आसन से उठकर अनेक सामग्रियों से उनकी पूजा की। इसके बाद इसके बाद भगवान बलराम जी कई वर्षों तक मिथिलापुरी में ही रहे। महात्मा जनक ने बड़े प्रेम और सम्मान से उन्हें रखा। इसके बाद समय पर धृतराष्ट्र के पुत्र दुर्योधन ने बलराम जी से गदा युद्ध की शिक्षा ग्रहण की। अपनी प्रिया सत्यभामा का प्रिय कार्य करके भगवान श्री कृष्ण द्वारका लौट आये और उनको यह समाचार सुना दिया कि शतधन्वा को मार डाला गया, परन्तु स्यमन्तक मणि उसके पास न मिली। इसके बाद उन्होंने भाई-बन्धुओं के साथ अपने श्वशुर सत्राजित की वे सब और्ध्वदैहिक क्रियाएँ करवाईं, जिनसे मृतक प्राणी का परलोक सुधरता है।

अक्रूर और कृतवर्मा ने शतधन्वा को सत्राजित के वध के लिए उत्तेजित किया था, इसलिए जब उन्होंने सुना कि भगवान श्री कृष्ण ने शतधन्वा को मार डाला है, तब वे अत्यन्त भयभीत हो द्वारका से भाग खड़े हुए। कुछ लोग ऐसा मानते हैं कि अक्रूर के द्वारका से चले जाने पर द्वारका वासियों को बहुत प्रकार के अनिष्टों और अरिष्टों का सामना करना पड़ा। दैविक और भौतिक निमित्तों से बार-बार वहाँ के नागरिकों को शारीरिक और मानसिक कष्ट सहना पड़ा। परन्तु जो लोग ऐसा कहते हैं वे पहले कही हुई बातों को भूल जाते हैं। भला, यह भी कभी सम्भव है कि जिन भगवान श्री कृष्ण में समस्त ऋषि-मुनि निवास करते हैं, उनके निवासस्थान द्वारका में उनके रहते कोई उपद्रव खड़ा हो जाय। उस समय नगर के बड़े-बूढ़े लोगों ने कहा- एक बार काशी नरेश के राज्य में वर्षा नहीं हो रही थी, सूखा पड़ गया था। तब उन्होंने अपने राज्य में आये हुए अक्रूर के पिता श्वफल्क को अपनी पुत्री गान्दिनी ब्याह दी। तब उस प्रदेश में वर्षा हुई। अक्रूर भी श्वफल्क के ही पुत्र है और इनका प्रभाव भी वैसा ही है। इसलिए जहाँ-जहाँ अक्रूर रहते हैं, वहाँ-वहाँ खूब वर्षा होती है तथा किसी प्रकार का कष्ट और महामारी आदि उपद्रव नहीं होते। उन लोगों की बात सुनकर भगवान ने सोचा कि इस उपद्रव का यही कारण नहीं है, यह जानकर भी भगवान ने दूत भेजकर अक्रूर जी को ढुँढ़वाया और आने पर उनसे बातचीत की। भगवान ने उनका खूब स्वागत सत्कार किया और मीठी-मीठी प्रेम की बातें कहकर उनसे सम्भाषण किया। भगवान सबके चित्त का एक-एक सङ्कल्प देखते रहते हैं। इसलिए उन्होंने मुसकराते हुए अक्रूर से कहा- चाचाजी! आप दान-धर्म के पालक हैं। हमे यह बात पहले से ही मालूम है कि शतधन्वा आपके पास वह स्यमन्तक मणि छोड़ गया है, जो बड़ी ही प्रकाशमान और धन देने वाली है। आप जानते ही हैं कि सत्राजित के कोई पुत्र नहीं है। इसलिए उनकी लड़की के लड़के- उनके नाती ही उन्हें तिलाञ्जलि और पिण्डदान करेंगे। उनका ऋण चुकायेंगे और जो कुछ बच रहेगा, उसके उत्तराधिकारी होंगे। इस प्रकार शास्त्रीय दृष्टि से यद्यपि स्यमन्तक मणि हमारे पुत्रों को ही मिलनी चाहिए, तथापि वह मणि आपके ही पास रहे। क्योंकि आप बड़े व्रतनिष्ठ और पवित्रात्मा हैं तथा दूसरों के लिए उस मणि को रखना अत्यन्त कठिन भी है। परन्तु हमारे सामने एक बहुत बड़ी कठिनाई यह आ गई है कि हमारे बड़े भाई बलराम जी मणि के सम्बंध में मेरी बात का पूरा विश्वास नहीं करते। इसलिए महाभाग्यवान अक्रूरजी! आप वह मणि दिखाकर हमारे इष्टमित्र - बलराम जी, सत्यभामा और जाम्बवती का सन्देह दूर कर दीजिए और उनके हृदय में शान्ति का सञ्च
ार कीजिए। हमे पता है कि उसी मणि के प्रताप से आजकल आप लगातार ही ऐसे यज्ञ करते रहते हैं, जिनमें सोने की वेदियाँ बनती हैं। जब भगवान श्री कृष्ण ने इस प्रकार सान्त्वना देकर उन्हें समझाया बुझाया, तब अक्रूर जी ने वस्त्र में लपेटी हुई सूर्य के समान प्रकाशमान वह मणि निकाली और भगवान श्री कृष्ण को दे दी। भगवान श्री कृष्ण ने वह स्यमन्तक मणि अपने जाति भाइयों को दिखाकर अपना कलङ्क दूर किया और उसे अपने पास रखने में समर्थ होने पर भी पुनः अक्रूर जी को लौटा दिया।

सर्वशक्तिमान सर्वव्यापक भगवान श्री कृष्ण के पराक्रमों से परिपूर्ण यह आख्यान समस्त पापों, अपराधों और कलङ्कों का मार्जन करने वाला तथा परम मङ्गलमय है। जो इसे पढ़ता, सुनता अथवा स्मरण करता है, वह सब प्रकार की अपकीर्ति और पापों से छूटकर शान्ति का अनुभव करता है।

पेज 9 का शेष

चैन की सांस ...

जिसमें सहनशीलता की कमी है, वह आदमी थोड़े से दुख में भी बहुत घबरा जाएगा। यह संसार तो सबके लिए एक जैसा ही है। इसी प्रकार, सच्चे शिष्य में पवित्रता, सच्ची-ज्ञान पिपासा अध्यवसाय होना आवश्यक है। सद्गुरु का कर्तव्य शिष्य को भगवान की ओर उन्मुख कर उनसे उसका संबंध जोड़ना है, और साधक का लक्ष्य एकमात्र भगवान से ही संबंध स्थापित करना है लौकिक गुरु के साथ संबंध स्थापित कर एक और सांसारिक बंधन में लिप्त होना नहीं। सद्गुरु को ढूंढना नहीं पड़ता। सद्गुरु द्वारा बताए गये धर्म मार्ग का अनुसरण करते हुए मनुष्य सांसारिक भवसागर से पार होकर प्रभु से जुड़ जाता है।

मित्रो, वास्तविक धर्म उसे कहते हैं जो जीवन में धारण करने लायक होता है। धर्म मनुष्य को उचित-अनुचित का ज्ञान कराता है। कैसे कर्म करना उचित है और किस प्रकार के कर्म करना अनुचित है। जन्म के समय प्रत्येक मनुष्य पशु के समान ही होता है। कुछ समझदार होने पर धर्म के मार्ग पर चलकर ही मनुष्य सच्चा मनुष्य बनता है। लोगों में यह गलत मान्यता है कि किसी विशेष प्रकार के रीति-रिवाज, पूजा-पाठ, कर्मकांड और वेश-भूषा अपनाना ही धर्म की पहचान है। वास्तविक, सच्चा और पूर्ण धर्म तो वह है जो संसार के सभी मनुष्यों पर समान रूप से लागू होता है। इसीलिए धर्म को सर्वव्यापी और सर्वकालिक माना गया है। जिसे लोग हिंदू, मुस्लिम, ईसाई, सिक्ख, पारसी या यहूदी धर्म आदि नामों से जानते हैं। ये सभी ईश्वर तक पहुंचने के अलग-अलग मार्ग या तरीके हैं। हिंदू, इस्लाम, सिक्ख, ईसाई आदि को धर्म की बजाए संप्रदाय कहना अधिक उचित है और तर्कसंगत है। पूर्ण धर्म तो वही हो सकता है जो सभी मनुष्यों को उचित आचरण और व्यवहार सिखाता है।

धर्म ही मनुष्य को जीवन जीने की युक्ति सिखाता है। धर्म से ही जीवन जीने के उद्देश्य की जानकारी मिलती है। धर्म से मनुष्य का आचरण संवारता है। धर्म से ही सच्चे और उत्तम मनुष्य की पहचान मिलती है। धर्म ही यह बताता है कि मनुष्य का पूर्ण विकास कैसे हो सकता है? धर्म ही मनुष्य की शक्ति है, धर्म ही मनुष्य का सच्चा शिक्षक है। धर्म के बिना मनुष्य अधूरा है। धर्म जीवन को कठिन नहीं, बल्कि सरल बनाने के लिए है। अगर हम धर्म के नियमों का पालन करेंगे तो कई परेशानियां स्वत: ही समाप्त हो जाएंगी। हमारे मनीषियों के अनुसार जीवन में ऐसा कोई क्षण नहीं होता जिसमें धर्म आवश्यक न हो। केवल भगवान को मानना, पूजापाठ, कर्मकांड या व्रत-उपवास ही धर्म नहीं है। वास्तविक धर्म तो अपने निजस्वरूप को पहचानना है। इसके अलावा वास्तविक धर्म तक ले जाने के लिए जो मनीषियों द्वारा मार्ग बतलाए गये हैं, वे भी धर्म कहे जाते हैं। ऐसे धर्म के दस लक्षण बताए गये हैं। इन्हें जीवन में उतारना लौकिक धर्म कहा जाता है।

जब हम लौकिक धर्म के इन दस लक्षणों को जीवन में उतारते हैं तो हमारा जीवन स्वयं वास्तविक धर्म से जुड़ जाता है। सबके लिए साधारण रूप से व्यवहार करने के कुछ नियम होते हैं। सत्य, कर्म, अहिंसा, अपरिग्रह, सेवा, संतोष, संयम, श्रद्धा आदि सामान्यत: लौकिक धर्म के सामान्य लक्षण कहे जाते हैं। ये सबके लिए व्यावहारिक और लाभदायक हैं। लगभग इन सारे शब्दों से बचते हुए कई लोग जीवन को अधिक सरल बनाने की कोशिश में जुटे रहते हैं। लेकिन इनके अभाव में जीवन में दो तरह के सुख कभी नहीं आ पाते - पहला शांति और दूसरा आनंद। मनुष्य सारे जीवन में इन्हीं दो चीजों की खोज में लगा रहता है लेकिन धर्म के मार्ग से भटक जाने के कारण शांति और आनंद तक पहुंच नहीं पाता। धर्म के मार्ग पर चलते हुए ही शांति और आनंद को प्राप्त कर मनुष्य चैन की सांस ले सकता है।

पेज 12 का शेष

महर्षि दधीचि

अज्ञानियों ने अपने अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्र महर्षि दधीचि के आश्रम में रख दिए थे। उन शस्त्रों के बिना इस समय हम क्या कर सकते हैं।

तदनन्तर ब्रह्मा जी की आज्ञा से सब देवता दधीचि के आश्रम पर गए और उनसे बोले- देव! हमने पूर्वकाल में जो अस्त्र-शस्त्र यहाँ रख दिए थे, वे सब हमें दे दिए जाएं। यह सुनकर दधीचि ने हँसते हुए कहा- बड़भागी देवताओं! आपके उन शस्त्रों को बहुत काल से यहाँ व्यर्थ रखा हुआ जानकर मैंने सबको पी लिया। उनकी यह बात सुनकर देवता बहुत चिन्तित हुए और पुनः ब्रह्मा जी के पास लौटकर मुनि की सब बातें कह सुनाईं।

तब ब्रह्मा जी ने सबके अभीष्ट कार्य की सिद्धि के लिए देवताओं से कहा- तुम लोग दधीचि से उनकी हड्डियाँ ही माँगो। माँगने पर वे देंगे, इसमें तनिक भी संशय नहीं है।

ब्रह्मा जी की बात सुनकर इन्द्र बोले- वृत्रासुर नामक जो दैत्यराज है, उसे विश्वकर्मा ने उत्पन्न किया है अतः वह ब्राह्मण ही है यद्यपि वह निरन्तर अत्यन्त क्रूरतापूर्ण कर्म करने वाला है, तथापि ब्राह्मण होने के कारण मैं उसका वध कैसे कर सकता हूँ। इन्द्र की बात सुनकर ब्रह्मा जी ने अर्थशास्त्र को प्रधानता देने वाली युक्ति से उन्हें समझाया और इस प्रकार कहा- देवराज! यदि कोई आततायी मारने की इच्छा से आ रहा हो तो, वह तपस्वी ब्राह्मण ही क्यों न हो उसे अवश्य मार डालने की इच्छा करे। ऐसा करने से वह ब्रह्महत्यारा नहीं हो सकता है।

ब्रह्मा जी का यह वचन सुनकर इन्द्र ने कहा- भगवन! दधीचि वध से निश्चय ही पतन हो जाएगा। उस ब्राह्मण की हत्या से सभी तरह के महान पाप अपने को लगेंगे। अतः हमें ब्राह्मण का अनादर नहीं करना चाहिए। परम धर्म अदृष्टरूप है। विज्ञ पुरुष को उचित है कि वह श्रेष्ठ विधि के अनुसार मनोयोग पूर्वक उस धर्म का पालन करे।

इन्द्र के निःस्पृह वचन सुनकर ब्रह्मा जी बोले- देवेन्द्र! तुम अपनी बुद्धि के अनुसार बर्ताव करो और शीघ्र ही दधीचि के पास जाओ। कार्य की गुरुता को दृष्टि में रखकर दधीचि की हड्डियाँ माँगो। बहुत अच्छा कहकर इन्द्र ने ब्रह्मा जी की आज्ञा स्वीकार की और गुरु बृहस्पति तथा सम्पूर्ण देवताओं के साथ दधीचि के मङ्गलमय आश्रम पर गए। वह आश्रम नाना प्रकार के जीव-जन्तुओं से संयुक्त होने पर भी पारस्परिक वैर भाव से रहित था। वहाँ बिल्ली और चूहे एक दूसरे को देखकर प्रसन्न होते थे। एक ही स्थान पर सिंह, हथिनियाँ, हाथी के बच्चे और हाथी परस्पर मिलकर नाना प्रकार की क्रीडाएं करते थे। नेवलों के साथ मिले हुए सर्प एक दूसरे से आनन्द का अनुभव करते थे। ऐसी-ऐसी अनेक आश्चर्यभरी बातें उस आश्रम पर दिखाई देती थी। दधीचि मुनि अपने उत्तम तेज से सूर्य अथवा दूसरे अग्निदेव की भाँति प्रकाशित हो रहे थे। उनके साथ उनकी धर्मपत्नी सुवर्चा भी थीं। जैसे सावित्री के साथ ब्रह्मा जी शोभा पाते हैं, उसी प्रकार वे मुनिश्रेष्ठ दधीचि भी अपनी धर्मपत्नी के साथ सुशोभित थे।

सम्पूर्ण देवताओं ने मुनि का दर्शन करके उन्हें प्रणाम किया और इस प्रकार कहा= मुने! हमें पहले से ही विदित है कि आप तीनों लोकों में सबसे बड़े दाता हैं।

देवताओं की यह बात सुनकर मुनिश्रेष्ठ दधीचि बोले- श्रेष्ठ देवगण! आप लोग जिस काम के लिए आए हैं, उसे बतायें। आपकी माँगी हुई वस्तु मैं अवश्य दूँगा, इसमें सन्देह नहीं है। मेरी बात कभी मिथ्या नहीं होती।

तब अपना स्वार्थ सिद्ध करने की इच्छा वाले सब देवता एक साथ बोले- ब्रह्मन्! हम लोग भयभीत होकर आपके दर्शन की अभिलाषा से यहाँ आए हैं। उनकी ये बातें सुनकर दधीचि ने कहा- बताइए आप लोगों के लिए क्या देना है। यों कहकर महर्षि ने अपनी पत्नी को आश्रम के भीतर भेज दिया। तदनन्तर देवता बोले- विप्रवर! आप अपने शरीर की हड्डियाँ हमें अर्पित करें, जिनसे दैत्यों का संहार हो सके। महर्षि ने कहा- मैंने हड्डियाँ आपको दे दीं। तब देवता बोले- भगवन! आपके आपके जीते जी इन हड्डियों को हम कैसे प्राप्त कर सकते हैं?

ब्रह्मर्षि ने हँसकर उत्तर दिया- बस, क्षणभर खड़े रहिये, मैं अभी अपना शरीर त्याग देता हूँ। ऐसा कहकर दधीचि ने समाधि लगा ली। उस परम समाधि के द्वारा अपना शरीर त्यागकर वे तत्काल उस ब्रह्मधाम में चले गए जहाँ से फिर इस संसार में लौटना नहीं पड़ता। इस प्रकार भगवान शङ्कर के प्रिय भक्त मुनिवर दधीचि परोपकार के लिए शरीर त्यागकर ब्रह्मपद को प्राप्त हुए।

महर्षि दधीचि को ब्रह्मलीन हुआ देख इन्द्र ने सुरभि को बुलाकर कहा- तुम दधीचि के शरीर को चाटो। बहुत अच्छा कहकर सुरभि ने तत्काल दधीचि के शरीर को चाटना आरम्भ किया। उसने सब ओर से चाटकर उस शरीर को मांसरहित कर दिया। तब देवताओं ने वे हड्डियाँ ले लीं और उनके शस्त्र बनाए।

उनकी पीठ की हड्डी से वज्र बना और शिर से ब्रह्मशिर नामक अस्त्र तैयार किया गया। ऋषि के शरीर की जो और भी बहुत सी हड्डियाँ थीं, उन्हें भी उस समय देवतओं ने ग्रहण कर लिया। इस प्रकार अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण करके महान बल पराक्रम से सम्पन्न हुए देवता वृत्रासुर को मारने के लिए उद्यत हो बड़ी उतावली के साथ स्वर्ग लोक में गए।

तत्पश्चात महर्षि दधीचि की पत्नी सुवर्चा देवी, जिन्हें देवताओं की कार्य सिद्धि के लिए महर्षि ने आश्रम के भीतर भेज दिया था, वहाँ पुनः लौटकर आईं और वहाँ जो कुछ हुआ था वह सब उन्होंने अपनी आँखों से देखा- यह सब देवताओं की ही करतूत है, ऐसा जानकर उस सती-साध्वी सुवर्चा के मन में बड़ा क्रोध हुआ। उन्होंने अत्यन्त रुष्ट होकर शाप देते हुए कहा- देवता आज से सन्तानहीन रहें। तपस्विनी सुवर्चा इस प्रकार देवताओं को शाप दे दिया और स्वयं एक पीपल वृक्ष के मूल भाग में बैठकर रोदन करने लगीं। इसी समय उनके उदर से महात्मा दधीचि के पुत्र महातेजस्वी पिप्लाद प्रकट हुए। माता सुवर्चा प्यासी आँखों से पुत्र पिप्लाद की ओर देखती हुई हँसकर बोलीं- महाभाग! तुम दीर्घकाल तक इस वृक्ष के ही समीप रहना। तुम मेरे आर्शीवाद से शीघ्र ही ऋषियों में श्रेष्ठ स्थान प्राप्त करोगे। अपने पुत्र के प्रति ऐसा कहकर साध्वी सुवर्चा श्रेष्ठ समाधि लगाकर पति के समीप चली गईं। इस प्रकार उन्होंने पति के साथ सत्यलोक प्राप्त किया।

इधर वे देवता लोग अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण करके युद्ध के लिए उत्सुक हो दैत्यों के सामने गए। इन्द्र आदि देवता महान बल और पराक्रम से युक्त थे। वे गुरु बृहस्पति को आगे करके भूमि पर आकर मध्य देश में ठहरे। उन सबके पास बड़े उत्तम शस्त्र थे। इन्द्र आदि देवताओं को आया हुआ सुनकर महातेजस्वी वृत्रासुर दैत्यवृन्द के साथ उनके समीप गया। महेन्द्र ने उस समराङ्गण में महादैत्य वृत्रासुर को देखा। देवताओं और दानवों का एक दूसरे की ओर दृष्टिपात बड़ा अद्भुत था। उनमें वैर-भाव बहुत बड़ा हुआ था। वे एक दूसरे को मार डालने की इच्छा से अत्यन्त क्रोध में भरकर अद्भुत स्वर में गर्जना करने लगे।

इस प्रकार महर्षि दधीचि की हड्डियों से बने वज्र से देवराज इन्द्र ने वृत्रासुर का वध किया। यदि महर्षि ने अपनी हड्डियों का दान नहीं किया होता तो किसी भी स्थिति में वे वृत्रासुर का वध करने में कामयाब नहीं होते। जब भी दानियों का जिक्र आता है महर्षि दधीचि का नाम सबसे पहले लिया जाता है।

हमारे प्रकाशन

श्री शनिचरणानुरागी श्री श्री 1008 महामंडलेश्वर दाती जी महाराज राजस्थानी ने कई महत्वपूर्ण विषयों पर अनेकानेक पुस्तकों की रचना की है। उनके अनेक ग्रंथ तो अब भी अप्रकाशित पड़े हुए हैं। प्रभु की कृपा से हम उनकी निम्नलिखित पुस्तकों को प्रकाशित करने में सफल हुए हैं, जिनकी काफी दिनों से प्रतीक्षा की जा रही थी। आशा है, इन पुस्तकों से पाठकगण विशेष लाभ उठाने में सफल होंगे।

ज्योतिष व वास्तु

पुस्तक का नाम	मूल्य (रु.)
सरल ज्योतिष प्रवेशिका	200
सरल गोचर प्रवेशिका	200
सरल मुहूर्त प्रवेशिका	100
सरल वास्तु प्रवेशिका	150
सरल हस्तरेखा विज्ञान प्रवेशिका	150
ताजिक ज्योतिष	150
सामान्य ज्योतिष एवं खगोल	50
शनि समग्र दर्शन (प्रथम भाग)	200
शनि समग्र दर्शन (द्वितीय भाग)	200
शनि साधना के चमत्कारिक प्रयोग	100
द्वादश भावों में श्री शनिदेव	100
क्या है शनि की साढेसाती और ढैय्या	100
शनि उपासना क्यों और कैसे?	200
शनि चरित्र गाथा व शनितीर्थ महात्म्य	100
शनि शांति के अमोघ देव अनुष्ठान	100
शनिवार व्रत विधि व कथा	25
काल सर्प योग	100

स्वास्थ्य व चिकित्सा

पुस्तक का नाम	मूल्य (रु.)
भोग रोग योग	200
चमत्कार को नमस्कार	100
अद्भुत देसी नुसखे भाग - 1	100
अद्भुत देसी नुसखे भाग - 2	200
अद्भुत देसी नुसखे भाग - 3	200
दाती गुरुमंत्र के उपाय खंड - 1	125
दाती गुरुमंत्र के उपाय खंड - 2	200
दाती गुरुमंत्र के उपाय खंड - 3	200
दाती गुरुमंत्र के उपाय खंड - 4	200
दाती गुरुमंत्र के उपाय खंड - 5	200
ग्रह-नक्षत्र शांति द्वारा रोगोपचार	80
मंत्रों द्वारा रोगोपचार	30
आसनों द्वारा रोगोपचार	30
प्राणायाम द्वारा रोगोपचार	25
रोगोपचार में उपयोगी हस्त मुद्राएं	30
रोगोपचार में उपयोगी रत्न	25
सूर्य रश्मियों के रंगों से रोगोपचार	20
तन-मन के रोगों से मुक्ति की युक्ति	25
आसन:आरोग्यता का अनुपम साधन	225
प्राणायाम	150

अध्यात्म

खुला आमंत्रण परमानन्द के लिए	100
मानुष तन दुर्लभ अति	30
हे कौन? जाओगे कहाँ? जानोगे कैसे?	100
जीवन शांत मन के साथ	35
तनाव मुक्त जीवन	35
गीता : मोह से मोक्ष तक की गाथा	50
लाली मेरे लाल की	125
समाधान	150
एक शाश्वत खोज	125
मर्म की बातें (I,II,III)	75
कुडलिनी जागरण	200
सफलता के सनातन सूत्र-प्रथम पुष्प	125
कार्य सफलता में बाधक तनाव	125
Living with peace of life	35
Eternal Bliss	150
Shedding of stress	50
Effectuation of Shani Adoration	200
Tiny Tips	125

संपर्क करें - श्री सिद्ध शक्ति पीठ शनिधाम ट्रस्ट, श्री शनि तीर्थ क्षेत्र असोला, फतेहपुर बेरी, महरोली, नई दिल्ली-74 फोन - 26654400, 26653600, फैक्स : 26653500

अपने-पराये के भेद से ऊपर उठकर पा लो निज सत्य स्वरूप का बोध - दाती श्री

भौतिक विज्ञान के विविध क्षेत्रों में जैसे-जैसे प्रगति होती जा रही है वैसे-वैसे अधिकांश मनुष्यों के अंदर एक क्षुद्र अहम इस प्रकार फैलता जा रहा है कि उसकी चपेट में अनेकानेक मानवोचित गुण अपना अस्तित्व खोते जा रहे हैं। आजकल एक फैशन ही चल गया है कि भगवान और भगवान की अस्मिता को मानने वाले सिद्धांतों की खिल्ली उड़ायी जाये। किंतु ऐसा करने वाले लोग यह भूल जाते हैं कि मनुष्य की बुद्धि चाहे जितनी भी प्रखर हो गयी हो किंतु ऐसी विलक्षण बुद्धि से युक्त मनुष्य नामक प्राणी को बनाने वाली वह सर्वोच्च सत्ता निश्चय ही उससे ऊपर है। अतः उसकी अस्मिता को नकारना किसी भी दृष्टि से उचित नहीं कहा जा सकता।

इस संसार में तरह-तरह के लोग रहते हैं। कुछ लोगों की मानसिकता अपने शरीर और निकट संबंधियों के हित साधन के दायरे में कैद रहती है तो कुछ लोगों को मनुष्य क्या, समस्त प्राणियों के हित साधन की चेष्टा करने में ही सुख-सुकून प्राप्त होता है। वे अपने निजी सुख-दुख की जरा भी परवाह न कर दूसरों की भलाई में अनवरत लगे रहते हैं। कुछ मनस्वी तो ग्राम, प्रांत व देश की सीमाओं से भी बहुत आगे निकल जाते हैं और उनके लिए पूरा विश्व ही एक परिवार बन जाता है। अधिकतर साधु-संत व फकीर ऐसे ही उदारमना होते हैं। सच पूछिए तो सच्चे साधु-संतों की सोच सामान्य लोगों से सर्वथा भिन्न होती है। वे गुरु-परंपरा से प्राप्त ज्ञान के आलोक में साधना कर इस सच्चाई को पूरी तरह आत्मसात कर चुके होते हैं कि मनुष्य जीवन का लक्ष्य जन्म-मरण के चक्र से छुटकारा पाने के लिए सतत् सचेष्ट रहना है। उन्हें अपने ही अंतरतम में समस्त चराचर विश्व नजर आने लगता है। अतः अपने-पराये की भावना उन्हें छू भी नहीं पाती। वे उस सर्वोच्च सत्ता से व्यावहारिक रूप से इस प्रकार जुड़ चुके होते हैं कि उन्हें सबके साथ एकात्मता की अनुभूति होने लगती है। उनके स्वांतः सुखाय का दायरा इतना फैल चुका होता है कि उसमें सबके सुख की कामना बड़ी आसानी से समा जाती है।

ऐसे साधु-संतों व भगवद् भक्तों के बाहरी खान-पान व आचार आदि में भिन्नता भले नजर आये किंतु वे भीतर से एक ही जैसे होते हैं। वे अपनी अस्मिता को पूरी तरह भगवान की भक्ति में समर्पित कर चुके होते हैं और उस आनंद को अनेक तरीकों से व्यक्त करते हुए दूसरे लोगों को भी प्रभु की भक्ति करने की प्रेरणा देने के लिए भगवान का गुणानुवाद करने लगते हैं। वे साधु-संत व भक्तजन प्रभु के पावन नाम का सुमिरण व जाप करके अपने मानव तन को सार्थक बनाया करते हैं। जब भक्तजन भगवान का गुणानुवाद करने में इतने तल्लीन हो जाते हैं कि वे अपनी स्वतंत्र अस्मिता को भी भुला बैठते हैं तब जाकर वे भीतर बाहर हर तरफ से परमात्मा में विलीन होने की प्रक्रिया में अग्रसर होते हैं। उसी क्रम में जब भक्ति मार्ग में अग्रसर भक्त पर प्रभु की विशेष अनुकंपा होती है तब वे भगवान के नाम-सुमिरण की विधा में पारंगत होने के लिए सचेष्ट होने लगते हैं। क्योंकि प्रभु की महिमा का गान करते रहने से मनुष्य के अंदर सबके प्रति सौहार्द्रता व अपनत्व की भावना बड़ी तेजी से विकसित होने लगती है। वसुधैव कुंटुंबकम् की उत्कृष्ट भावना उसके अंदर कुलांचे मारने लगती है। उसके अंतर्तम में स्वतः गुरुकृपा से प्राप्त प्रभु के नाम, मंत्र व स्वरूप के निरंतर सुमिरण-भजन की प्रवृत्ति उभरने लगती है और वह प्रवृत्ति ही माता के समान उसके सारे क्लेशों को दूर कर उसे निश्चिंत बना देती है। उसे इस बात का स्पष्ट आभास होने लगता है कि इस चराचर जगत में जो भी जड़-चेतन प्रत्यक्ष रूप से दृष्टिगोचर हो रहा है तथा जो किसी भी युक्ति से दिखायी नहीं दे रहा है, उसे भी सही रूप में तभी देखा जा सकता है जब गुरु द्वारा प्रदत्त ज्ञान से मनुष्य का विवेक जाग्रत हो उठता है। संतों ने भगवान की भक्ति में भजन-सुमिरण की महिमा को रेखांकित करते हुए स्पष्ट किया गया है कि प्रभ नाम सुमिरण की साधना करने वाला व्यक्ति वेदों के गूढ़ातिगूढ़ रहस्यों को भी उजागर करने में सफल हो जाता है।

गुरु से प्राप्त दीक्षा मंत्र व नाम का सुमिरण करते हुए जब भक्त गुरु आज्ञा के अनुकूल आचरण करने लगता है तब स्वाभाविक रूप से उसके अंदर वैसे अद्भुत गुण जाग्रत होने लगते हैं जो अन्य लोगों में नहीं पाये जाते। जब भक्त प्रभु के नाम सुमिरण में पूरी तरह लवलीन हो जाता है तब वह खुद भी वह मंत्र ही बनकर रह जाता है, वह वही नाम बन जाता है जिसे वह जप रहा होता है। दूसरे शब्दों में भजन-साधना में पूरी तरह एकाग्र होने पर जीव के अंदर का अहम पूरी तरह नष्ट हो जाता है, अथवा वह इतना विराट हो जाता है कि उसी में सारा ब्रह्माण्ड ही सिमट जाता है और तभी वह विशिष्ट मंत्र या नाम सिद्ध हुआ माना जाता है।

प्राचीन धर्मग्रंथों में इस बात को अनेक ढंग से समझाया गया है। स्वच्छंद तंत्र के अनुसार वही मंत्र सफल है जिसको जपने वाला अविनाशी परमात्मा स्वरूप सद्गुरु से मिल चुका हो अर्थात जिसे अपने गुरुत्व का ज्ञान हो चुका हो। मंत्र को इस प्रकार जपना चाहिए, मंत्र में इस प्रकार तल्लीन होना चाहिए मानो जाप करने वाला खुद ही मंत्र बन गया हो। उसके अंदर ऐसा भाव नहीं रहे कि जाप करने वाले व्यक्ति से मंत्र कोई अलग वस्तु है। जब ऐसा होता है तभी मंत्र को आत्मसात किया जाना या आत्मरूप बनाया जाना संभव हो पाता है।

इसीलिए मैं सबसे कहता हूं कि यदि अपने जीवन में शाश्वत सुख-शांति की सुधा का स्वाद लेना चाहते हो तो आप भी अपने-पराये के संकुचित दायरे से मुक्त हो सारे विश्व को अपना परिवार बनाने के लिए, विश्व के समस्त प्राणियों से एकात्मता स्थापित करने के लिए साधु-संतों के उस भावभूमि पर पहुंचने का प्रयास करें ताकि आपका भी स्वांतः सुखाय सबके सुख की कामना से एक रस हो जाये। किंतु याद रहे, साधु-संतों व भक्तों के उस भावभूमि पर पहुंचने के लिए आवश्यक है कि आप भी उन्हीं की तरह सनातन गुरु परंपरा से प्राप्त युक्ति का अवलंबन ले सत्य का अपने ही अंतरतम में साक्षात्कार कर उससे जुड़े रहने की अनवरत चेष्टा करते रहें। देर न करें, आज और अभी से सत्य के साक्षात्कार के मार्ग पर अग्रसर होने का दृढ़ संकल्प लें और अपने जीवन में उस शाश्वत सुख की सुधा को प्रवाहित होने का परिवेश सृजित करें।

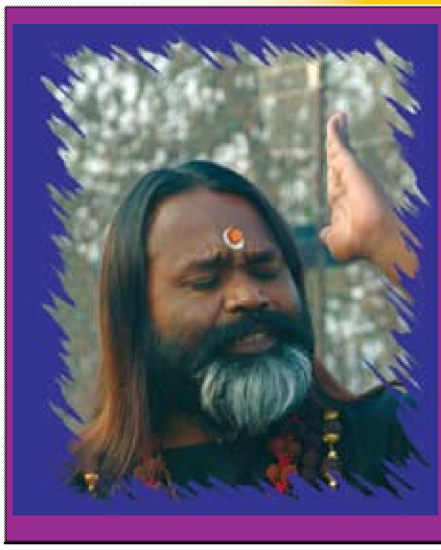

दाती के अनमोल वचन

गुरुमंत्र में जरुर देखिये INDIA TV

पर हर रोज रात्रि 11:00 बजे